अगर सच्चाई और अच्छाई हमारे अंदर नहीं तो दुनिया के किसी कोने में भी नहीं मिलेगी।
– अज्ञात

आरोप–प्रत्यारोप का सिलसिला

बहस का अव्वल और आखिर कंगना रनौत ही हैं, जिनकी टीम और जो खुद ट्विटर या किसी टीवी न्यूज चैनल पर रोज ही किसी न किसी पर केंद्रित अपनी बात कहती हैं और फिर दूसरी तरफ से जवाबों का सिलसिला शुरू होता है।

ज्योति सिंह।

मुंबई फिल्म इंडस्ट्री में मौजूद भाई–भतीजावाद को लेकर इधर कुछ दिनों से शुरू हुई बहस का दायरा फैलता ही जा रहा है, लेकिन इसकी धार कुंद हो चुकी है। बहस का अव्वल और आखिर कंगना रनौत ही हैं, जिनकी टीम और जो खुद ट्विटर या किसी टीवी न्यूज चौनल पर रोज ही किसी न किसी पर केंद्रित अपनी बात कहती हैं और फिर दूसरी तरफ से जवाबों का सिलसिला शुरू होता है।

आम लोगों के लिए अब यह किसी तमाशे जैसा है, हालांकि बॉलिवुड के अंधेरे पहलुओं को लेकर बरसों से छाई चुप्पी का टूटना एक लिहाज से अच्छा ही कहा जाएगा। इंडस्ट्री के कुछ हलकों में देखी जा रही बेचैनी के बावजूद इंडस्ट्री से बाहर इस चर्चा को शुरू में बहुत उत्साह से लिया गया। दिक्कत यह हुई कि आरोप–प्रत्यारोप का सिलसिला जैसे–जैसे आगे बढ़ा, इसके दायरे में बहुत लोग आते गए और इसका कोई मतलब निकालना मुश्किल होता गया।

मुंबई फिल्म इंडस्ट्री का वर्किंग मॉडल समय बीतने के साथ कई बार बदला है। ऐक्टर से लेकर राइटर, टेक्नीशन और एक्स्ट्रा तक से वेतनभोगी कर्मचारियों की तरह काम लेने वाली फिल्म कंपनियों से लेकर अभी कुल लागत का आधा हिस्सा रखा लेने वाले सुपर–सितारों तक यह कई बार बदला है। अभी के स्टार सिस्टम को इस इंडस्ट्री के निखरने में एक बड़ी बाधा की तरह देखा जा रहा है।

'शोले' फिल्म की मिसाल लें तो लोगों ने उसे सिर्फ धर्मेंद्र और अमिताभ बच्चन के लिए नहीं, सूरमा भोपाली और अंग्रेजों के जमाने के जेलर के लिए भी कई–कई बार देखा। लेकिन अभी की मेगा फिल्मों के हर फ्रेम में एक ही चेहरा दिखाई देता है। बॉलिवुड की मुख्यधारा इधर काफी समय से ऐसे ही कुछ बड़े सितारों, निर्माता–निर्देशकों और उनके परिजनों के इर्दगिर्द घूमती रही है, जो जब–तब नए लोगों को मौके देते भी हैं तो अपनी शर्त पर।

ऐसे में जब नेपोटिज्म और इनसाइडर–आउटसाइडर जैसे जुमलों को लेकर चर्चा शुरू हुई तो लगा कि इस बहस से शायद इंडस्ट्री में ताजा हवा का कोई झोंका आएगा। लेकिन देखते–देखते यह पुराना हिसाब–किताब बराबर करने की मुहिम का रूप लेती चली गई। जिन पर 'नेपोटिज्म' का आरोप था वे किनारे हो गए, हमले की जद में ऐसे तमाम अभिनेता, अभिनेत्रियां और निर्देशक आते गए, जिनका फिल्म इंडस्ट्री के पुराने परिवारों से कुछ भी लेना–देना नहीं है। जो इक्का–दुक्का सफलताओं के बावजूद आज भी इंडस्ट्री में अपनी जगह बनाने के लिए संघर्ष कर रहे हैं। चाहे वह किसी टॉक शो में हुई मजाकिया बातचीत के आधार पर किसी को किसी की मृत्यु का दोषी बताना हो या किसी खास रोल के लिए इसके बदले उसको चुन लेने को सोची–समझी साजिश करार देना– ब्यौरे बताते हैं कि बॉलिवुड ने खुद को सुधारने का एक बेहतरीन मौका गंवा दिया और कोरोना के ठलुआ दिनों में ऐसी कड़वाहट पाल ली, जिसकी छाप अगले कई सालों तक मुंबइया फिल्मों पर दिखाई देती रहेगी।

सच्ची खुशी

धर्म-दर्शन

अशोक वोहरा। सच्ची खुशी पाना इतना भी कठिन नहीं है जितना हम सोचते हैं। स्थाई खुशी हमें अवश्य मिल सकती है, यदि हम उसे सही स्थान पर खोजें तो। प्रत्येक मनुष्य की मूल आवश्यकता है कि वह प्रेम कर सके और प्रेम पा सके। जब मनोवैज्ञानिक मनुष्य की मूल आवश्यकताओं की बात करते हैं, तो भोजन, कपड़ा, मकान व सुरक्षा के साथ–साथ वे प्रेम को भी इसमें शामिल करते हैं। साधारणतया, व्यक्ति बाहरी दुनिया में अपने माता–पिता, भाई–बहनों और रिश्तेदारों से प्रेम की उम्मीद करते हैं। बड़े होने के साथ ही वे अपने मित्रों, पति या पत्नी और अपने बच्चों से प्रेम की उम्मीद करते हैं। दुर्भाग्य से, जीवन में कभी–कभी हम यह सीखते हैं कि ये प्रेम अस्थायी होते हैं। संबंध बदलते रहते हैं। बच्चे दूर चले जाते हैं और माता–पिता गुजर जाते हैं।

संपादकीय

समता के नए वाहक

ध्यान देने की बात है कि जब भी सांप्रदायिक सद्भाव, कौमी एकता और धर्मनिरपेक्षता की बात होती है तो इसके केंद्र में सवर्ण हिंदू और मुस्लिम एकता ही होती है। इस केंद्र से दलित को बहिष्कृत कर दिया जाता है। ऐसे में वह एक असहाय समाज के रूप में दोराहे पर खड़ा दिखाई देता है, मानो वह केवल इस्तेमाल के लिए ही बना हो। सांप्रदायिक तनावों के विश्लेषण में अब जाति प्रस्थान बिंदु बन रही है। इसी से धर्मनिरपेक्षता की नई और आधुनिक परिभाषा निकलेगी। दलित सामाजिक आंदोलन के लिए यह एक बड़ी चुनौती है कि वह सन 2000 के बाद वाली अपनी नौजवान पीढ़ी को सामाजिक समता की संस्कृति का वाहक कैसे बनाए। वह अपनी सांस्कृतिक पहचान तलाश रहा है। उसकी इस चाहत को वर्चस्ववादी राजनीतिक शक्तियों ने बहुत पहले ही पहचान लिया। इसलिए जब भी दलित–मुस्लिम में मामूली सा भी विवाद होता है, वे इसे सांप्रदायिक रूप देने की हर संभव कोशिश करती हैं। भारत में अगर सांप्रदायिक तनाव का इतिहास देखें तो हिंदू पहचान के नाम पर हिंसा का शिकार होने वाले सबसे ज्यादा दलित और पिछड़े रहे हैं। गुजरात के सामाजिक कार्यकर्ता राजू सोलंकी के अनुसार साल 2002 के गोधरा दंगों में अहमदाबाद में कुल 2945 लोगों को गिरफ्तार किया गया था। इनमें 1577 हिंदू थे और 1368 मुसलमान। गिरफ्तार किए गए हिंदुओं में 797 ओबीसी थे और 747 दलित, सिर्फ 2 ब्राह्मण थे, बाकी अन्य जातियों के। दलित और पिछड़े समाज के लगातार हो रहे प्रतिसंस्कृतिकरण को ही ध्यान में रखकर चिंतक कांचा इलैया ने अपनी पुस्तक 'मैं हिंदू क्यों नहीं हूं' में भारतीय समाज के आधुनिकीकरण के लिए 'दलितीकरण' को प्रस्तावित किया।

रामचरित मानस का नियमित पाठ करने वाले मेरे नाना ताजिये में खेले जाने वाले खेल 'लकड़ी' में सबसे आगे होते। हम बच्चों के लिए यह एक मेले जैसा ही रोमांचकारी होता।

बिगड़ते बनते रिश्ते

राम नरेश राम।

बात 1990 के आस–पास की होगी। तब मेरी उम्र 6–7 साल थी। हम सभी भाई–बहन मई–जून में पड़ने वाला ताजिया उत्सव देखने मामा के घर जाया करते थे। मामा के गांव में ब्राह्मण और क्षत्रिय छोड़कर प्रायरू सभी जातियों के लोग रहते थे। कह सकते हैं कि यह गांव प्रजा जातियों का गांव था, जिसमें कुछ घर मुस्लिमों के भी थे। मुस्लिमों की आर्थिक स्थिति बाकी प्रजा जातियों की तुलना में बेहतर थी। कुछ तो पहले के जमींदार भी थे, लेकिन अब उनके पास जमीन नहीं बची थी। उनके परिवारों के ज्यादातर लोग लखनऊ में रहते थे, लेकिन जब भी ताजिये उठते, वे वापस अपने गांव आ जाते। ताजिये का यह उत्सव मुस्लिम आयोजित करते, लेकिन इसमें गांव के सभी लोग शामिल होते और सभी सैय्यद की मजार पर मलीदा भी चढ़ाते। रामचरित मानस का नियमित पाठ करने वाले मेरे नाना ताजिये में खेले जाने वाले खेल 'लकड़ी' में सबसे आगे होते। हम बच्चों के लिए यह एक मेले जैसा ही रोमांचकारी होता।

गांव में मुस्लिम जमींदारों के घरों में दलित लोग हलवाही किया करते थे। जाहिर है कि यह रिश्ता मालिक और मजदूर का था। ऐसे में मुस्लिम परिवारों के लोग दलित लोगों के साथ

वैसा ही व्यवहार करते थे, जैसा सवर्ण करते थे। भारत के अनेक क्षेत्रों में जहां दलितों की तुलना में धनी और खेतिहर मुस्लिम हैं, वहां अभी भी ऐसे ही रिश्ते कायम हैं। आज भी बदलते राजनीतिक और सामाजिक परिवेश में यही रिश्ता बीच–बीच में तनाव का रूप ले लेता है, जिसका इस्तेमाल प्रतिक्रियावादी लोग अपने राजनीतिक हित के लिए करते रहते हैं। दलित साहित्य में इस रिश्ते की संरचना को महसूस किया जा सकता है।

भारत में दलित समाज की विशेषता यह है कि उनका कोई निश्चित भोजन–व्यवहार होना संभव नहीं था। वे अपनी तंग आर्थिक स्थिति के कारण सभी जाति और धर्म के भोजन–व्यवहार में साझा करते थे। यही कारण है कि दलित समाज उस गांव में भी मुस्लिम भोजन–व्यवहार को साझा करता था। धीरे–धीरे जब दलित समाज की आर्थिक स्थिति सुधरने लगी तो एक तरफ उन्होंने अपना जातिगत पेशा छोड़ना शुरू किया और दूसरी तरफ उनका भोजन–व्यवहार भी बदला। फिर तो उनकी सांस्कृतिक पहचान भी बदलने लगी। उनके सामाजिक जीवन में हिंदू सांस्कृतिक पहचान के चिह्नों को जगह मिलने लगी। दूसरे शब्दों में अब उनका 'संस्कृतिकरण' हो रहा था। बदलाव की इस प्रक्रिया का असर सामाजिक संरचना पर पड़ना ही था। लेकिन उस गांव में गरीब मुसलमान भी रहते थे, जिनकी सामाजिक और आर्थिक हालत दलितों जैसी ही थी। कामकाजी जिंदगी में साझा होने के कारण उनके साथ आज भी संबंध कमोबेश पहले जैसे ही बने हुए हैं।

उत्तर प्रदेश के आजमगढ़ और जौनपुर जिलों में जून महीने में कई ऐसी घटनाएं घटी हैं, जिनमें दलित और मुस्लिमों के बीच टकराव हुआ है। जौनपुर में तो दोनों समुदायों के बच्चों के बीच जानवर चराने के दौरान हुए मामूली विवाद ने सांप्रदायिक रूप ले लिया, जबकि आजमगढ़ में दलित बच्चियों के साथ 'छेड़खानी' का मामला बताया गया। मीडिया रिपोर्ट्स को देखें तो मिलती–जुलती घटनाओं की निरंतरता दिखाई देती है। ऐसे में यह संदेह पैदा होता है कि ऐसी घटनाएं मामूली विवाद को सांप्रदायिक रूप देने का परिणाम हैं। इसमें कोई दो राय नहीं कि भारत में दलित तबका अपनी मुक्ति की बेचैनी के कारण सबसे गतिशील समाज है।

अष्टयोग- 5128

4	7		6		2	
	34	6	38		25	
5	1			6	2	4
	30	1	33		34	
3			4		1	6
	31	4	31	4	34	
2	3		4			7

प्रस्तुत खेल सुडोकू व जोड़ की पद्धति का मिश्रण है. खड़ी व आड़ी पंक्तियों में 1से 7 तक के अंक लिखने अनिवार्य हैं. गहरे काले वर्ग में लिखी संख्या चारों ओर के 8 वर्गों की संख्या का कुल योग होगी. सीधी अथवा आड़ी पंक्तियों में 1 से 7 तक के अंक होना अनिवार्य है.

अष्टयोग 5127 का हल

7	6	5	4	1	3	2
4	36	2	34	6	26	1
5	1	6	3	7	2	4
6	34	1	33	3	30	5
3	5	7	4	2	1	6
2	27	4	35	4	36	7
1	2	3	6	5	7	4

Jagrutidaur.com, Bangalore

अपना ब्लॉग

भारतीय वायरस नेपाल के लिए ज्यादा खतरनाक

मोहन। इस संदर्भ में देखें तो सबसे खराब स्थिति दलित समाज की है। अगर वह हिंदू पहचान को अपना 'गौरव' बनाता है तो रुढ़िवादी–जातिवादी सवर्णों को परेशानी होती है और समय–समय पर वे उसे उसकी औकात याद दिलाते रहना जरूरी समझते हैं। दूसरी ओर अगर दलित इस पहचान के साथ सांप्रदायिक टकराव में हिस्सेदार होते हैं तब भी सबसे ज्यादा नुकसान उन्हीं का होता है। इसके अनेक उदाहरण हैं। पिछले दिनों सीएए और एनआरसी के खिलाफ देशभर में होने वाले विरोध–प्रदर्शनों में मुसलमानों के साथ–साथ दलितों की खूब भागीदारी दिखी थी। यह मुस्लिम–दलित एकता की नई मिसाल सत्ता के लिए परेशानी का सबब बन गई थी। यह एकता वर्चस्व के प्रचलित राजनीतिक समीकरण के लिए एक चुनौती बनकर उभरी थी। इसलिए इस एकता को खंडित करने के लिए सांप्रदायिक ध्रुवीकरण कराकर दोनों समुदायों को एक–दूसरे के खिलाफ खड़ा करने की कोशिश की गई।